अजहर सुल्ताना

बनाम बी. राजमनी व अन्य

सिविल अपील नं. 1077/2009

फरवरी 17,2009

(न्यायमूर्ति एस.बी. सिन्हा और साईरिक जोसफ)

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963:

धारा 16(सी),19(बी)- भूमि का पश्चातवर्ती क्रेता- संविदा की विनिर्दिष्ट पालना की प्रार्थना-पूर्ववर्ती क्रय का ज्ञान- संविदा के पालन की इच्छा व तत्परता-स्थापित करने में विफल-संविदा की विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री प्रदान करना न्यायालय का विवेकाधिकार- दोनों पक्षकारों का आचरण सही नहीं- न्यायहित में यह उचित होगा कि न्यायालय अपने विवेकीय शक्ति का प्रयोग करने से इंकार कर दे और प्रतिवादी को निर्देशित किया कि वह अग्रीम भुगतान की गई राशि को सम्मिलित करते हुए वादी को 60,000 रूपये संदत् करे- सम्पति अंतरण अधिनियम 1882।

पश्चातवर्ती क्रेता, जिसे संविदा की विनिर्दिष्ट पालन के वाद में बाद के प्रक्रम पर पक्षकार के रूप में जोडा गया, द्वारा इस अपील में उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय को प्रश्नगत किया है।

अपील का निस्तारण करते हुए इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया -

1. इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि सक्षम प्राधिकारी से अनुमोदन प्राप्त करना आवश्यक था, वादी इस उपधारणा पर आगे नहीं बढ़ सकता था कि मूल प्रतिवादी की ओर से करार की शर्तों के अनुसार उक्त विक्रय विलेख निष्पादित करने से इन्कार की तारीख से तीन साल की अवधि के भीतर वाद संस्थित किया जा सकता है। (पैरा 14)(548-बी, सी)

2. संपतियां प्रतिवादी संख्या 5 और 6 के कब्जे में थी। विक्रय विलेख पंजीकृत था। इसलिए, वादी को संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 3 के संदर्भ में इसकी सूचना होना समझा जाना चाहिए। हालाँकि, उन्होंने न तो अपने नोटिस में और न ही अपने वाद-पत्र में श्री खन्ना और प्रतिवादी संख्या 5 और 6 के बीच हुए विक्रय के संव्यवहार की प्रामाणिकता या अन्यथा के संबंध में कोई प्रश्न उठाया। उक्त विक्रय विलेख दिनांक 30.10.1981 के निष्पादन से पहले, खन्ना द्वारा बहादुर हुसैन के खिलाफ संस्थित वाद अपीलीय न्यायालय द्वारा दिनांक 30.11.1978 के एक निर्णय और डिक्री द्वारा खारिज कर दिया गया था। ऐसा कोई कारण प्रतीत नहीं होता कि वादी को यह क्यों नहीं कहा जा सकता कि उसे इसकी जानकारी क्यों नहीं थी। इसलिए, यह आवश्यक था कि न केवल पश्चातवर्ती खरीददारों को बल्कि बहादुर हुसैन को भी वाद में पक्षकार बनाया जाता। यह ध्यान

रखना महत्वपूर्ण है कि उक्त लिखित कथन का प्रतिउत्तर भी प्रस्तुत किया गया था, जिसके लिए कोई अनुमति नहीं ली गई थी। (पैरा 15) (548-डी, ई, एफ)

3. निर्विवाद रूप से फिर से, हालांकि श्री खन्ना द्वारा लिखित कथन 30.8.1983 को दायर किया गया था, प्रतिवादी संख्या 5 और 6 को केवल वर्ष 1987 में पक्षकार के रूप में शामिल किया गया था। प्रतिउत्तर में पहली बार, वादी ने आरोप लगाया कि वहाँ खन्ना और बहादुर हुसैन की दुर्भी:सन्धि थी। हालाँकि, बहादुर हुसैन को एक पक्षकार के रूप में शामिल नहीं किया गया था। प्रतिउत्तर 1991 में पेश किया गया। ऐसा विवाद केवल 1991 में उठाया गया है जो विधि में अस्वीकार्य था। (पैरा संख्या 16)(548-जी, एच; 549-ए)

4. यह सच हो सकता है कि क्रेता के नाम का खुलासा नहीं किया गया था, लेकिन तब वादी के पास उक्त लिखित कथनो के अन्य और उचित विशिष्टियां मांगने का अधिकार था। पश्चातवर्ती क्रेताओं को पक्षकारों के रूप में संयोजित करने के लिए उन्हें तीन साल से अधिक की अवधि तक इंतजार क्यों करना पड़ा, यह स्पष्ट नहीं किया गया है। यहां तक कि निषेधाज्ञा के लिए एक आवेदन भी सितंबर 1985 में ही दायर किया गया था। वादिया के पति के अनुसार, उन्हें प्रतिवादी नंबर 5 के नाम पर संपत्ति के विक्रय के बारे में 29.9.1986 को ही पता चला था। विक्रय पत्र पंजीकृत

होने के बावजूद पंजीकरण कार्यालय में इसकी जांच क्यों नहीं की गई, यह फिर से किसी की समझ से परे है। इसलिए, वादी की ओर से अपने भाग का पालन करने की तत्परता और इच्छा पर उपरोक्त घटनाओं की पृष्ठभूमि से विचार किया जाना आवश्यक है। (पैरा 17)(549-बी, सी)

5. यह आवश्यक नहीं है कि प्रतिफल की सम्पूर्ण राशि तैयार रखी जाए और वादी को उसके संबंध में साक्ष्य प्रस्तुत करना हो यह तर्क देना भी सही हो सकता है कि केवल इसलिए कि वादी जो कि एक मुस्लिम महिला है, ने स्वयं को परीक्षित नहीं करवाया और अपनी ओर से अपने पति को परीक्षित करवाया, इससे यह निष्कर्ष नहीं निकलेगा कि वह करार के अपने भाग का पालन करने के लिए तैयार और रजामंद नहीं थी। (पैरा 20)(551-सी)

5.2. यदि वादिया यह स्थापित करने में विफल रही है कि वह करार के अपने भाग का पालन करने के लिए हमेशा तैयार और इच्छुक थी, तो हमारी राय में, इस प्रश्न का निर्धारण करना आवश्यक नहीं होगा कि क्या प्रतिवादी संख्या 5 और 6 बिना सूचना के सदभावपूर्वक प्रतिफलार्थ पश्चातवर्ती खरीददार थे। इसके अलावा, करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए डिक्री देना न्यायालय के विवेकाधीन है। यहां विरोधी प्रत्यर्थीगण वर्ष 1981 से अधिकार पूर्वक संपत्ति में रह रहे हैं। ऐसा कोई कारण नहीं है कि इस समय उन्हें उक्त संपत्ति खाली करने के लिए विवश किया जाए।

(पैरा 21,22)(551-डी,ई)

5.3. वादी ने स्वयं सकारात्मक दलील दी है कि खन्ना और बहादुर हुसैन के बीच दुर्भी:सन्धि थी। लेकिन इस दलील की न तो पैरवी की गई है और न ही इसे साबित किया गया है। इस संबंध में कोई विवाद्यक बिन्दु भी नहीं बनाया गया। अन्यथा भी प्रतिवादीगण द्वारा अपने भार का निर्वहन करने का प्रश्न तभी पैदा होता है जब वादी संविदा के विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री प्राप्त करने का अधिकारी हो। (पैरा 23)(551-एफ,जी)

6. प्रतिवादी का आचरण अच्छा नहीं था, लेकिन इसी तरह, हम अपीलकर्ताओं के आचरण को भी नजरअंदाज नहीं कर सकते। वह यह दिखाने के लिए कोई साक्ष्य भी नहीं लाई थी कि उसके पास उक्त विक्रय पत्र की सूचना नहीं थी। इसलिए, हमारी राय है कि न्याय हित में होगा यदि यह न्यायालय अधिनियम की धारा 20 के संदर्भ में अपने विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने से इन्कार कर देता है और प्रतिवादी को निर्देशित किया जाता है कि वह अग्रिम भुगतान की गई राशि को सम्मिलित करते हुए वादी को 60,000/- रुपये संदत्त करे। (पैरा 24) (551-एच,552-ए,बी)

वीरयी अम्मल बनाम सैनी अम्मल (2002)1 एससीसी 134 और राम अवध (मृत्तक) जरिये विधिक प्रतिनिधि व अन्य बनाम अछेबार दुबे व अन्य (2000) 2 एससीसी 428- पर भरोसा जताया गया ।

महाराव साहिब श्री भीमसिंह जी , अनन्तलक्ष्मी पथवी रामाशर्मा यतुरी व अन्य, जोधन रियल स्टेट डवलपमेंट कम्पनी (पी) लि. व अन्य, राजेन्द्र गर्ग वगैरा, शमशूल इस्लाम वगैरा बनाम भारत संघ व अन्य । ए.आई.आर. 1981 सुप्रीम कोर्ट 234- रैफर्ड टू-

केस लॉ रेफरेंस

ए.आई.आर 1981 एससी 234	संदर्भित	पैरा 8
(2002) 1 एससीसी 134	भरोसा किया	पैरा 18
(2000) 2 एससीसी 428	भरोसा किया	पैरा 19

सिविल अपीलीय अधिकारिता : सिविल अपील संख्या 1077/2009

उच्च न्यायालय आंध्रप्रदेश, हैदराबाद द्वारा नगर सिविल न्यायालय अपील संख्या 51/1993 में पारित अंतिम निर्णय व आदेश दिनांक 21.12.2004 के विरूद्ध।

अपीलकर्ता की ओर से - उदय यू. ललित, एस. उदयकुमार सागर, वीना माधवन, वैभव मिश्रा और एच. वेणुगोपाल (मैसर्स लाॅयर्स नीट एण्ड कम्पनी के लिए)।

प्रत्यर्थीगण की ओर से- रणजीत कुमार, एस. मधुसूदन बाबू, वी. वेकंटारमण, पी. प्रभाकर और पी. वेकंटारमण (मुकेश के. गिरी के लिए)।

न्यायालय का यह निर्णय न्यायमूर्ति एस.बी. सिन्हा द्वारा सुनाया गया ।

1. अनुमति प्रदान की जाती है।

2. पश्चातवर्ती क्रेता जिसे संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के एक वाद में पश्चातवर्ती प्रक्रम पर पक्षकार के रूप् में संयोजित किया गया था, ने हमारे समक्ष आन्ध्रप्रदेश उच्च न्यायालय, हैदराबाद के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 21.12.2004 को पारित एक निर्णय व आदेश जिसके द्वारा प्रथम अतिरिक्त न्यायाधीश सिटी सिविल न्यायालय हैदराबाद आेएस संख्या 1436/1981 द्वारा पारित निर्णय व आदेश दिनांक 21.07.1993 को खारिज करते हुए वादी के वाद को अस्वीकार कर दिया, से व्यथित व असंतुष्ट होकर यह अपील प्रस्तुत की है।

3. इसमें शामिल तथ्यात्मक पहलू इस प्रकार है:

यह स्वीकृत तथ्य है कि विवादग्रस्त संपत्ति मूल प्रतिवादी रमेश चंद खन्ना की थी। अपीलकर्ता और उक्त रमेश चंद खन्ना द्वारा और उनके बीच विक्रय का एक करार किया गया था, जिसके अनुसार वाद भूमि को 325/- रुपये प्रति वर्ग गज की दर से बेचने पर सहमति हुई थी। अग्रिम राशि के रूप में 30,000/- रुपये की राशि का भुगतान किया गया।

4. अब यह स्वीकार किया गया है कि 7.12.1981 को या उसके

आसपास, शहरी भूमि सीमा और (विनियमन) अधिनियम , 1970 की धारा 27 के तहत एक आवेदन दायर किया गया था। उक्त आवेदन खारिज कर दिया गया था।

यह भी विवाद में नहीं है कि मूल प्रतिवादी के खिलाफ बहादुर हुसैन नाम के एक व्यक्ति ने वाद दायर किया था। उक्त वाद का निर्णय उक्त श्री बहादुर हुसैन के पक्ष में सुनाया गया।

5. प्रतिवादी संख्या 5 और 6 ने दिनांक 31.10.1981 को 217 वर्ग गज की भूमि के लिए उक्त रमेश चंद खन्ना (मृतक) के साथ विक्रय का करार किया। 48,000/- रुपये प्रति बीघे की दर से गणना की गई जिसके लिए रमेश चंद खन्ना और उक्त बहादुर हुसैन के बीच विवाद के निपटारे के लिए बातचीत की जानी थी। विक्रय विलेख के निष्पादन के बाद ही, अपीलकर्ता द्वारा एक नोटिस जारी किया गया जिसमें श्री खन्ना से अपीलकर्ता के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए कहा गया।

विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद दिनांक 7.12.1981 को या उसके आसपास संस्थित किया गया था। जैसा कि यहां पहले बताया गया है, मूल वाद में प्रतिवादी संख्या 5 और 6 को पक्षकार के रूप में शामिल नहीं किया गया था। श्री खन्ना द्वारा लगभग 30.8.1983 को उसके आसपास एक लिखित कथन दायर किया गया था जिसमें उन्होंने दिनांक 31.10.1981 के विक्रय विलेख के निष्पादन के तथ्य का खुलासा किया । उक्त

प्रतिवादियों को पक्षकार बनाया गया। इस प्रकार जोड़े गए प्रतिवादी द्वारा उठाए गए तर्कों में से एक यह था कि वे प्रतिफलार्थ सदभावपूर्वक पश्चातवर्ती खरीदार थे और उन्होंने उक्त विक्रय अपीलकर्ताओं और श्री खन्ना के बीच विक्रय के मूल करार की सूचना हुए बिना किया गया था।

6. पक्षों की दलीलों को ध्यान में रखते हुए, विद्वान विचारण न्यायाधीश ने निम्नलिखित विवाद्यक बिन्दु विरचित किए:

"1) क्या वादी वाद में अनुसूचित संपत्ति के संबंध में करार के विनिर्दिष्ट पालन का हकदार है?

2) क्या मुकदमा परिसीमा द्वारा वर्जित है?

3) अनुतोष ?

अतिरिक्त बिन्दु भी तय किए गए, जैसे. :

1) क्या प्रतिवादी संख्या 6 वाद संपत्ति का वादी के पक्ष में किये गए मूल करार की सूचना के बिना सदभावपूर्वक प्रतिफलार्थ क्रेता है ?

2) क्या विक्रय का करार प्रतिवादी संख्या 5 व 6 सहित प्रतिवादियों पर बाध्यकारी नहीं है ?"

विद्वान विचारण न्यायाधीश ने अन्य बातों के साथ-साथ यह कहते

हुए वाद को डिक्री किया कि प्रतिवादी संख्या 5 और 6 को वादी और खन्ना द्वारा और उनके बीच किए गए के बारे में जानकारी थी और इस प्रकार, विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 19(बी) का प्रावधान आकर्षित नहीं हुआ।

निर्विवाद रूप से, विद्वान विचारण न्यायाधीश के समक्ष वादी-अपीलकर्ता ने स्वयं को परीक्षित नहीं करवाया। उसकी ओर से, उसके पति, जो जनरल पावर ऑफ अटॉर्नी के धारक भी थे, का परीक्षण किया गया ।

विद्वान विचारण न्यायालय ने दिनांक 4.12.1978 के करार को प्रवर्तनीय करने योग्य माना। इसके अलावा यह माना गया कि वाद परिसीमा से बाधित नहीं था। यह संप्रेक्षित किया गया कि यद्यपि किसी करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए डिक्री देना विवेकाधीन प्रकृति का है, लेकिन चूंकि वादी ने पर्याप्त राशि का भुगतान किया है, इसलिए उसे इसका हकदार माना जाना चाहिए।

प्रतिवादी संख्या 5 और 6 ने इसके विरुद्ध अपील दायर की। आक्षेपित निर्णय के कारण, जैसा कि यहां पहले देखा गया, उच्च न्यायालय ने उक्त अपील की अनुमति दी। उच्च न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 41 नियम 31 के संदर्भ में अपने विचार के लिए निम्नलिखित बिंदु तैयार किए, जो इस प्रकार हैं:

"1) क्या वादी, Ex.A1 के विनिर्दिष्ट पालन का प्रवर्तन करने की मांग करने का हकदार है?

2) क्या प्रतिवादी संख्या 06 वाद में अनुसूचित संपत्ति का वास्तविक क्रेता है, जिसने मूल करार की सूचना के बिना, सदभावपूर्वक प्रतिफल भुगतान कर दिया है?और

3) क्या इस न्यायालय के विवेक का प्रयोग Ex.A1 के विनिर्दिष्ट पालन के लिए वादी के पक्ष में नहीं किया जाना चाहिए?"

7. करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए एक वाद में न्यायालय को निम्नलिखित प्रश्न पूछने की आवश्यकता होती है, अर्थात्:

(1) क्या विक्रय का करार क्रेता और विक्रेता दोनों के लिए वैध और बाध्यकारी है; और

(2) क्या वादी हमेशा से ही विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963(इसके बाद संक्षिप्तता के लिए अधिनियम के रूप में संदर्भित किया गया है)) की धारा 16(सी) के तहत परिकल्पित, करार के अपने भाग का पालन करने के लिए तैयार और इच्छुक है।

8. हालाँकि, यह माना गया कि वादी की ओर से करार के अपने

हिस्से को पूरा करने की तत्परता और इच्छा एक टेलीग्राफिक नोटिस (प्रदर्श ए 3) में बताई गई थी; यह वादी की ओर से अनिवार्य था- अपीलकर्ता को वाद में स्वयं को परीक्षित करवाने की आवश्यकता है और चूंकि उसने स्वयं को परीक्षित नहीं करवाया है, इसलिए अधिनियम की धारा 16 (सी) के तहत परिकल्पित कानूनी आवश्यकताओं का अनुपालन नहीं किया गया है। इसके अलावा यह माना गया कि चूंकि यह स्थापित करने के लिए कोई साक्ष्य पेश नहीं किया गया था कि प्रतिवादी को भुगतान की जाने वाली प्रतिफल की राशि वादी के पास उपलब्ध थी, वह करार के अपने भाग का पालन करने के लिए तैयार और इच्छुक नहीं थी। यह देखा गया कि उपरोक्त उद्देश्य के लिए, कानूनी नोटिस दिनांक 16/20.11.1981 (Ex.A3) की सामग्री निर्णायक नहीं होगी। यह देखते हुए कि इस तथ्य के बावजूद कि 1976 अधिनियम की धारा 27 को इस न्यायालय द्वारा महाराव साहब श्री भीमसिंहजी;अनंतलक्ष्मी पाठाबी रामशर्मा येतुरी और अन्य; जोधन रियल एस्टेट डेवलपमेंट कंपनी (पी) लिमिटेड और अन्य; राजेंद्र गर्ग आदि; शमशुल इस्लाम आदि बनाम भारत संघ एवं अन्य [एआईआर 1981 एससी 234] के मामले में अधिकारातीत घोषित कर दिया गया था; यह राय थी कि चूंकि उक्त प्रावधान प्रासंगिक समय में कानून की पुस्तक में था, इसलिए विक्रय विलेख ऐसी अनुमति प्राप्त किए बिना निष्पादित नहीं किया जा सकता था और यहां तक कि उस कारण से, वादी अपीलकर्ता यह स्थापित करने के लिए कि वह करार में अपना भाग

का पालन करने के लिए तैयार और इच्छुक थी, कोई भी फायदा प्राप्त नहीं कर सकती थी ।

विद्वान न्यायाधीश की राय थी कि चूंकि वादी-अपीलकर्ता ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश VIII नियम 9 के संदर्भ में पश्चातवर्ती लिखित कथन दाखिल करने के लिए कोई अनुमति नहीं ली थी, जिसमें अन्य बातों के अलावा, यह आरोप लगाया गया था कि प्रतिवादी संख्या 5 और 6 बाद के खरीदार थे जिनके पास पूर्व के करार की सूचना थी, उस पर कोई संज्ञान नहीं लिया जाना चाहिए था और इस प्रकार, विचारण कोर्ट ने कहा होगा कि उसने इस पर विचार करने में त्रुटि की है। इसके अलावा यह राय दी गई कि ट्रायल न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकालने में गलती की कि पहले प्रतिवादी, छठे प्रतिवादी और बहादुर हुसैन के बीच दुर्भी:सन्धि थी, जैसा कि इस तथ्य से पता चलता है कि न तो PW1 ने और न ही PW3 जिन्होंने वादी के मामले का समर्थन करने के लिए स्वयं को परीक्षित करवाया, ने इस संबंध में कोई कथन नहीं किया और न ही वादपत्र में इस आशय का कोई अभिवचन किया गया । इसके अलावा यह राय दी गई कि चूंकि उक्त प्रतिवादी संपत्ति के कब्जे में थे, जो संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 3 के अर्थ के तहत एक नोटिस के समान होगा, वादी को इसके बारे में ज्ञान होना माना जाएगा।

दूसरे बिंदु के संबंध में, उच्च न्यायालय ने कहा कि अधिनियम की

धारा 19 (बी) के संबंध में, वादी को उक्त प्रतिवादी के खिलाफ करार का विनिर्दिष्ट पालन नहीं दिया जा सकता है, जो बिना किसी सूचना के प्रतिफलार्थ सदभावपूर्वक पश्चातवर्ती क्रेता था। DW1 ने स्पष्ट रूप से कहा कि प्रतिवादी नंबर 1 को विक्रय के उक्त करार के बारे में कोई जानकारी नहीं थी।

जहां तक तीसरे बिंदु का संबंध है जो उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश के निर्धारण के लिए था, यह माना गया कि छठे प्रतिवादी ने 31.10.1981 को संपत्ति खरीदी थी और 30 वर्षों से अधिक समय से उसका उपयोग कर रहा था, यह ऐसा मामला नहीं था जहां अधिनियम की धारा 20 के संदर्भ में विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग उसके पक्ष में किया जाना चाहिए।

10. अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री उदय.यू. ललित इस अपील के समर्थन में आग्रह किया कि :

1) वादी के लिए स्वयं को परीक्षित करवाना आवश्यक नहीं था क्योंकि उसके पति जो उसके जनरल पावर ऑफ अटॉर्नी धारक थे, को परीक्षित किया गया था और विशेष रूप से भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 120 को ध्यान में रखते हुए।

2) प्रतिवादी की ओर से तत्परता और इच्छा की दलील स्थापित करने के उद्देश्य से, यह साबित करना आवश्यक नहीं था कि उसके हाथ में पर्याप्त परिनिर्धारित नकदी थी, क्योंकि उक्त उद्देश्य के लिए यह दिखाना पर्याप्त होगा कि वह उचित स्तर पर प्रतिफल के भुगतान के लिए ऐसी राशि की व्यवस्था कर सकती थी ।

3) श्री खन्ना और प्रतिवादी नंबर 5 और 6 के बीच दुर्भी :सन्धि इस तथ्य से स्पष्ट है कि विक्रय करार के निष्पादन के तीन साल बाद केवल 48,000/- रुपये की राशि के लिए विक्रय विलेख निष्पादित किया गया था, हालांकि राशि दिनांक 4.12.1978 के विक्रय करार के आधार पर प्रतिफल की राशि 65,000/- रुपये होगी और जिसमें से 35,000/- रुपये की राशि का भुगतान पहले ही किया जा चुका है।

4) प्रतिवादी संख्या 5 और 6 ने, वादग्रस्त भूमि को खरीदने से पहले कोई पूछताछ नहीं की और न ही कोई लोक सूचना जारी किया, यह साबित करने का भार कि वे प्रतिफलार्थ और बिना किसी सूचना के सदभावपूर्वक खरीदार थे, उन पर था।

5) उच्च न्यायालय की ओर से पूरे मामले में दृष्टिकोण

गलत था, जैसा कि इस तथ्य से पता चलता है कि यद्िप पश्चातवर्ती अभिवचनों को अप्रासंगिक माना गया था, उसके पैराग्राफ 9 में दिए गए कथनों पर उच्च न्यायालय द्वारा,यह दर्शाने के उद्देश्य से कि लिखित बयान के पैराग्राफ 5 और 6 में दिए गए बयानों को विज्ञापित नहीं किया गया था,भरोसा किया गया, और इस प्रकार, इसे स्वीकार कर लिया गया माना जाएगा, जो अन्यथा प्रत्युत्तर के पैरा 9 को गलत तरीके से पढ़ने और गलत व्याख्या करने के समान होगा।"

11. दूसरी ओर, प्रतिवादी की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री रंजीत कुमार ने आग्रह किया:

1) इस मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, यह एक उपयुक्त मामला नहीं है जहां इस न्यायालय को अधिनियम की धारा 20 के तहत अपने क्षेत्राधिकार का प्रयोग करना चाहिए और विशेष रूप से इस तथ्य पर कि प्रतिवादी 1981 से परिसर में रह रहा है।

2) वाद परिसर के संबंध में कम राशि के भुगतान के कारणों पर विचार किया जाना चाहिए क्योंकि श्री खन्ना पहले ही संपत्ति के संबंध में बहादुर हुसैन से अपना वाद हार चुके थे और यह केवल उक्त प्रत्यर्थीगण के हस्तक्षेप के कारण था, कि श्री खन्ना उपरोक्त विक्रय विलेख निष्पादित कर सकते थे।

3) चूंकि 4.12.1978 के विक्रय करार में ही यह निर्धारित है कि शीर्षक में कोई त्रुटि पाए जाने की स्थिति में, क्रेता केवल प्रतिफल की पूरी राशि की वापसी प्राप्त करने का हकदार था, अपीलार्थी को करार के विनिर्दिष्ट पालन के के लिए कोई डिक्री प्रदान नहीं हो सकती थी।

4) क्रेता की ओर से तत्परता और इच्छा का आकलन घटनाओं की पूरी पृष्ठभूमि से किया जाना चाहिए, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि वादी ने तीन साल की अवधि के लिए कोई नोटिस जारी नहीं किया और/या कोई वाद संस्थित नहीं किया, जहां से यह स्पष्ट है कि वह करार के अपने भाग का पालन करने के लिए हर समय तैयार और इच्छुक नहीं था।

12. समझौते का निष्पादन और/या उसकी वास्तविकता प्रश्नगत नहीं है। वादी को निर्विवाद रूप से विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963, की धारा 16 (सी) के संबंध में आवश्यक अभिकथन करने की आवश्यकता थी कि वह करार के अपने भाग का पालन करने के लिए पहले से ही तैयार थी और अब भी तैयार है और इसे स्थापित भी करना चाहती है । श्री खन्ना ने अपने लिखित कथन में एक विशिष्ट बचाव किया कि चूंकि संपत्ति विचाराधीन थी, वादी ने उदासीनता बरती और विक्रय पर शेष राशि का भुगतान करके विक्रय संव्यवहार को पूरा करने में कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई। कथित तौर पर संपत्ति बेचने के बाद भी वादी के प्रतिनिधि से 30,000/- रुपये की राशि वापस लेने के लिए कहा गया था।

13. इस स्तर पर, हम दिनांक 4.12.1978 के उक्त विक्रय करार में दिए गए कथनों पर ध्यान देंगे:

> "(i) कि सीलिंग अधिकारी से अनुमति प्राप्त करने के बाद, मैं 2 महीने के भीतर क्रेता के पक्ष में पंजीकरण निष्पादित करूंगा। सीलिंग कार्यालय से अनुमति प्राप्त करना मेरी जिम्मेदारी होगी।
>
> (ii) विक्रय-संपत्ति सभी निजी और सार्वजनिक शुल्कों और देयताओं से मुक्त है। यदि कोई पता चलता है, तो मैं उसका भुगतान करने के लिए जिम्मेदार होऊंगा। यदि शीर्षक में कोई त्रुटि पाई जाती है तो संपूर्ण अग्रिम धनराशि वापस कर दी जाएगी।
>
> (iii) पंजीकरण के समय, मैं पूरी संपत्ति का कब्ज़ा क्रेता को सौंप दूंगा। पंजीकरण का खर्च क्रेता द्वारा वहन किया जाएगा।"

14. निर्विवाद रूप से, खन्ना ने संबंधित परिसर की विक्रय की मंजूरी के लिए एक आवेदन दायर किया। यह आवश्यक था क्योंकि 1981 में ही उक्त प्रावधान को अधिकारातीत घोषित कर दिया गया था। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि सक्षम प्राधिकारी से अनुमोदन प्राप्त करना आवश्यक

था, वादी इस उपधारणा पर आगे नहीं बढ़ सकता था कि मूल प्रतिवादी की ओर से करार की शर्तों के अनुसार उक्त विक्रय विलेख निष्पादित करने से इन्कार की तारीख से तीन साल की अवधि के भीतर वाद संस्थित किया जा सकता है।

15. संपतियां प्रतिवादी संख्या 5 और 6 के कब्जे में थी। विक्रय विलेख पंजीकृत था। इसलिए, वादी को संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 3 के संदर्भ में इसकी सूचना होना समझा जाना चाहिए। हालाँकि, उन्होंने न तो अपने नोटिस में और न ही अपने वाद-पत्र में श्री खन्ना और प्रतिवादी संख्या 5 और 6 के बीच हुए विक्रय के संव्यवहार की प्रामाणिकता या अन्यथा के संबंध में कोई प्रश्न उठाया। उक्त विक्रय विलेख दिनांक 30.10.1981 के निष्पादन से पहले, खन्ना द्वारा बहादुर हुसैन के खिलाफ संस्थित वाद अपीलीय न्यायालय द्वारा दिनांक 30.11.1978 के एक निर्णय और डिक्री द्वारा खारिज कर दिया गया था। ऐसा कोई कारण प्रतीत नहीं होता कि वादी को यह क्यों नहीं कहा जा सकता कि उसे इसकी जानकारी नहीं थी। इसलिए, यह आवश्यक था कि न केवल पश्चातवर्ती खरीददारों को बल्कि बहादुर हुसैन को भी वाद में पक्षकार बनाया जाता। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि उक्त लिखित कथन की प्रतिउत्तर प्रस्तुत किया गया था, जिसके लिए कोई अनुमति नहीं ली गई थी।

16. निर्विवाद रूप से फिर से, हालांकि श्री खन्ना द्वारा लिखित कथन

30.8.1983 को दायर किया गया था, प्रतिवादी संख्या 5 और 6 को केवल वर्ष 1987 में पक्षकार के रूप में शामिल किया गया था। प्रतिउत्तर में पहली बार, वादी ने आरोप लगाया कि वहाँ खन्ना और बहादुर हुसैन की दुर्भी:सन्धि थी। हालाँकि, बहादुर हुसैन को एक पक्षकार के रूप में शामिल नहीं किया गया था। प्रतिउत्तर 1991 में पेश किया गया। ऐसा विवाद प्रथम बार 1991 में उठाया गया है जो विधि में अस्वीकार्य था।

17. यह सच हो सकता है कि क्रेता के नाम का खुलासा नहीं किया गया था, लेकिन तब वादी के पास उक्त कथनो के अलावा और उचित विशिष्टियां मांगने का अधिकार था। पश्चातवर्ती क्रेताओं को पक्षकारों के रूप में संयोजित करने के लिए उन्हें तीन साल से अधिक की अवधि तक इंतजार क्यों करना पड़ा, यह स्पष्ट नहीं किया गया है। यहां तक कि निषेधाज्ञा के लिए एक आवेदन भी सितंबर 1985 में ही दायर किया गया था। वादिया के पति के अनुसार, उन्हें प्रतिवादी नंबर 5 के नाम पर संपत्ति के विक्रय के बारे में 29.9.1986 को ही पता चला था। विक्रय पत्र पंजीकृत होने के बावजूद पंजीकरण कार्यालय में इसकी जांच क्यों नहीं की गई, यह फिर से किसी की समझ से परे है। इसलिए, वादी की ओर से अपने भाग का पालन करने की तत्परता और इच्छा पर उपरोक्त घटनाओं की पृष्ठभूमि से विचार किया जाना आवश्यक है।

18. विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम,1963 की धारा 16(सी) वादी की

ओर से निरंतर तत्परता और इच्छा को आवश्यक निर्धारित करती है। यह करार के विनिर्दिष्ट पालन का अनुतोष प्राप्त करने के लिए एक आवश्यक शर्त है। न्यायालय , अपनी विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए करती है कि क्या वाद उचित समय के भीतर दायर किया गया था। हालाँकि, उचित समय क्या होगा, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। इसके लिए कोई कठोर नियम नहीं बनाया जा सकता।

इस संबंध में पक्षकारों का आचरण भी महत्वपूर्ण होगा।

वीरायी अम्मल बनाम सीनी अम्मल [(2002) 1 एससीसी 134] में यह संप्रेक्षित किया गया:

"11. जब समय करार का सार/मर्म नहीं था, तो अपीलकर्ता-वादी को उचित समय के भीतर न्यायालय से संपर्क करने की आवश्यकता थी। चंद रानी बनाम कमल रानी के मामले में इस माननीय न्यायालय की एक संविधान पीठ ने कहा कि अचल संपत्ति के विक्रय के मामले में समय के करार का सार/मर्म होने के बारे में कोई उपधारणा नहीं है। भले ही यह करार का सार/मर्म न हो, न्यायालय यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि इसे उचित समय में पूरा किया जाना है यदि शर्तें (i) करार की स्पष्ट शर्तों से; (ii) संपत्ति की प्रकृति से; और (iii) आसपास की परिस्थितियों से, उदाहरण के लिए, करार करने का उद्देश्य से प्रतीत होती है। अनुतोष प्रदान करने के

प्रयोजनों के लिए, मामले के सभी तथ्यों और परिस्थितियों से उचित समय सुनिश्चित किया जाना चाहिए।"

इसके अलावा यह भी देखा गया:

> "13. कानून में "युक्तियुक्त" शब्द का प्रथमदृष्टया अर्थ उन परिस्थितियों के संबंध में युक्तियुक्त है, जिनमें संबंधित व्यक्ति को सम्यक रूप से कार्य करने के लिए कहा जाता है,या वह जानता है या उसे जानना चाहिए कि क्या युक्तियुक्त था। शब्द "युक्तियुक्त" की सटीक परिभाषा बताना अनुचित हो सकता है। इसका कारण है कि व्यक्ति के स्वभाव और उस समय और परिस्थितियों के अनुसार अपने निष्कर्ष में भिन्न होता है जिसमें वह सोचता है। "युक्तियुक्त समय" का शाब्दिक अर्थ उतना समय होना है जितना किसी विशेष मामले में उन परिस्थितियो में, करार या कर्तव्य का सुविधाजनक ढंग से किया जाने के लिए आवश्यक हो। दूसरे शब्दों में इसका अर्थ है, जैसे ही परिस्थितियाँ अनुमति दें। पी. रामनाथ अय्यर की द लॉ लेक्सिकन में इसका अर्थ इस प्रकार परिभाषित किया गया है:
>
> `मामले की सभी परिस्थितियों को देखते हुए एक उचित समय; सामान्य परिस्थितियों में उचित समय; जैसे ही

परिस्थितियाँ अनुमति देंगी; परिस्थितियों में जितना आवश्यक हो उतना समय, सुविधाजनक रूप से वह करने के लिए जो करार के लिए आवश्यक है, किया जाना चाहिए; 'प्रत्यक्ष' की तुलना में कुछ अधिक स्थान; कार्य या कर्तव्य की प्रकृति और उपस्थित परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए इतनी समयावधि, जो उचित रूप से, और उचित रूप से, और उचित रूप से अनुमति दी जा सकती है या आवश्यक हो सकती है; ये सभी एक ही विचार व्यक्त करते हैं।"

19. यह भी कानून का एक सुस्थापित सिद्धांत है कि न केवल मूल विक्रेता बल्कि पश्चातवर्ती क्रेता भी यह तर्क देने का हकदार होगा कि वादी करार के अपने हिस्से को पूरा करने के लिए तैयार और इच्छुक नहीं था। [राम अवध (मृत) जरिये विधिक प्रतिनिधि व अन्य. बनाम अछैबर दुबे एवं अन्य, [(2000) 2 एससीसी 428 पैरा 6]

20. हालाँकि, हम श्री ललित से सहमत हैं कि उपरोक्त उद्देश्य के लिए यह आवश्यक नहीं है कि प्रतिफल की सम्पूर्ण राशि तैयार रखी जाए और वादी को उसके संबंध में साक्ष्य प्रस्तुत करना हो यह तर्क देना भी सही हो सकता है कि केवल इसलिए कि वादी जो कि एक मुस्लिम महिला है, ने स्वयं को परीक्षित नहीं करवाया और अपनी ओर से अपने पति को परीक्षित करवाया, इससे यह निष्कर्ष नहीं निकलेगा कि वह करार के अपने

भाग का पालन करने के लिए तैयार और रजामंद नहीं था।

21. यदि वादी यह स्थापित करने में विफल रही है कि वह करार के अपने भाग का पालन करने के लिए हमेशा तैयार और इच्छुक थी, तो हमारी राय में, इस प्रश्न का निर्धारण करना आवश्यक नहीं होगा कि क्या प्रतिवादी संख्या 5 और 6 बिना सूचना के सदभावपूर्वक प्रतिफलार्थ पश्चातवर्ती खरीददार थे।

22. इसके अलावा, करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए डिक्री देना न्यायालय के विवेकाधीन है। यहां विरोधी प्रत्यर्थीगण वर्ष 1981 से अधिकार पूर्वक में संपत्ति में रह रहे हैं। ऐसा कोई कारण नहीं है कि इस समय उन्हें उक्त संपत्ति खाली करने के लिए विवश किया जाए।

23. वादी ने स्वयं सकारात्मक दलील दी है कि खन्ना और बहादुर हुसैन के बीच दुर्भी:सन्धि थी। लेकिन इस दलील की न तो पैरवी की गई है और न ही इसे साबित किया गया है। इस संबंध में कोई बिन्दु भी नहीं बनाया गया। अन्यथा भी प्रतिवादीगण द्वारा अपने सबूत के भार का निर्वहन करने का प्रश्न तभी पैदा होता है जब वादी संविदा के विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री प्राप्त करने का अधिकारी हो।

24. हालाँकि, हम श्री ललित से सहमत हैं कि प्रतिवादी का आचरण अच्छा नहीं था, लेकिन इसी तरह, हम अपीलकर्ताओं के आचरण को भी

नजरअंदाज नहीं कर सकते। वह यह दिखाने के लिए कोई साक्ष्य भी नहीं लाई थी कि उसके पास उक्त विक्रय पत्र की सूचना नहीं थी। इसलिए, हमारी राय है कि न्याय के हित की रक्षा होगी यदि यह न्यायालय अधिनियम की धारा 20 के संदर्भ में अपने विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने से इन्कार कर देता है, प्रतिवादी को निर्देशित किया जाता है कि वह अग्रिम भुगतान की गई राशि को सम्मिलित करते हुए वादी को 60,000/- रुपये संदत्त करे।

25. अपील निस्तारित की जाती है। हालाँकि, इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, खर्चो के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया जाता है।

अपील खारिज।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी नीलम करवा (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण : यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।